ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-7* September- 2020
Innovation The Research Concept

पीटर बर्जर का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण – एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

Sociological view of Peter Berger - A sociological Analysis

Paper Submission: 15/09/2020, Date of Acceptance: 25/09/2020, Date of Publication: 26/09/2020

अरविन्द कुमार मिश्र
असिस्टेण्ट प्रोफेसर,
समाजशास्त्र विभाग,
ईश्वर शरण पी.जी. कॉलेज
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

रवि कुमार मिश्र
एसोसिएट प्रोफेसर,
समाजशास्त्र विभाग,
नागरिक पी. जी. कॉलेज,
जंघई, जौनपुर, उत्तर प्रदेश,
भारत

सारांश

समकालीन समाज सूचना प्रौद्योगिकी और वैश्वीकरण की प्रक्रिया से प्रभावित है। इस दौर में अर्थ और यर्थाथ लगातार परिवर्तित हो रहे हैं। यह सामान्य रूप से महसूस किया जा रहा है कि हम एक नये यथार्थ की अनुभूति सामाजिक रूप से कर रहे हैं। इसके साथ–साथ धर्म और जीवन के अन्य क्षेत्र में भी परिवर्तन देखे जा रहे है। समाजशास्त्र विषय भी लगातार विस्तृत होता जा रहा है और उसमें गुणात्मक शोध और अन्तरअनुशासनीय पद्धति का महत्व बढता जा रहा है। ऐसे में पीटर बर्जर का विविधतापूर्ण अध्ययन विशेषकर सामाजिक यथार्थ का निर्माण कैसे होता है यह जानना आवश्यक हो जाता है। इन्हीं पृष्ठभूमि में यह अध्ययन एक पुनरावलोकन की दृष्टि से किया गया है।

Contemporary society is influenced by information technology and the process of globalization. Earth and meaning are constantly changing in this period. It is being commonly felt that we are realizing a new reality socially. Along with this, changes are being seen in religion and other areas of life. The subject of Sociology is also constantly expanding and the importance of qualitative research and interdisciplinary methodology is increasing in it. In such a situation, it becomes necessary to know Peter Berger's diverse study, especially how social reality is created. It is in this background that this study has been done from a retrospective point of view.

मुख्य शब्द : सामाजिक वास्तविकता, वाह्यकरण, वस्तुकरण, आन्तरीकरण, पवित्र वितान।

Social Reality, Externalization, Objectification, Internalization, Sacred Canopy.

प्रस्तावना

मूलतः आस्ट्रिया के रहने वाले और बाद में अमेरिकी समाजशास्त्री पीटर बर्जर अपने समाजशास्त्रीय योगदान के लिए बहुत चर्चित रहे हैं। उन्होंने अपने विषय पर गंभीरतापूर्वक चिंतन प्रस्तुत किया है, वास्तविकताएं कैसे समाज द्वारा निर्मित होती हैं, इसे स्पष्ट किया है और धर्म के समाजशास्त्र और ज्ञान के समाजशास्त्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। समकालीन परिदृश्य में पीटर बर्जर की प्रासंगिकता इसलिए बढ जाती है कि हम एक वैश्विक युग में जी रहे हैं, सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका बढती जा रही है, समाजशास्त्र में भी गुणात्मक शोध बढ रहे हैं और अन्तरअनुशासनीय पद्धति को महत्व दिया जा रहा है और जाना पहचाना समाज काफी तेजी से परिवर्तित हो रहा है। इनविटेशन टू सोशियोलॉजी के अतिरिक्त उन्होंने समाजशास्त्र को अपनी अन्य महत्वपूर्ण रचनाएं दी हैं– थॉमस लकमैन के अतिरिक्त उन्होंने कैलेनर के साथ मिलकर भी पुस्तकें लिखी हैं। इनमें द सोश्यल कन्सट्रक्शन ऑफ रियलिटी (1966), द सेक्रेड कैनोपी (1967), द होमलेस माइंड (1973), फेसिंग अप टू मॉडर्निटी (1977), द वॉर ओवर द फैमिली (1983), द कैपिटलिस्ट रिवोल्यूशन (1986), रिडिमिंग लाफ्टर (1997)[1] आदि पुस्तकें कालजयी हैं और दिलचस्प लेखन शैली के कारण पर्याप्त चर्चित रही हैं।

अध्ययन का उद्देश्य एवं प्रासंगिकता

प्रस्तुत शोध आलेख में हम उनके चिंतन के विविध आयामों को आलोचनात्मक ढंग से समझने का प्रयास कर रहे हैं। उनके चिंतन के विविध आयामों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू है– मनुष्य, समाज और समाजशास्त्र का मानवीय उन्मुखन, वास्तविकता की सामाजिक निर्मिति और धर्म का समाजशास्त्र प्रमुख है। इन विषयों पर उनकी चर्चा इसलिए आज ज्यादा आवश्यक है कि आज हम वैश्वीकरण और सूचना प्रौद्योगिकी के युग में जी रहे हैं। आज विविध संस्कृतियों में सम्पर्क बढा है, मूल्यों की बहुलता है, स्थापित मान्यताएं लगातार चुनौतियां पा रही हैं, लोगों की धार्मिक पृष्ठभूमि में अब अन्य कई आयाम सम्बद्ध होते जा रहे हैं। स्वयं समाजशास्त्र को इस उत्तर आधुनिक और वैश्विक परिदृश्य में विविध चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। गुणात्मक और अन्तरअनुशासनीय अध्ययन की चर्चा आज ज्यादा होती जा रही है। ऐसे परिदृश्य में पीटर बर्जर की स्वाभाविक रूप से प्रासंगिकता हो जाती है।

पीटर बर्जर ने अपनी प्रसिद्ध कृति इनविटेशन टू सोशियोलॉजी को मानवीय उन्मुखन के साथ लिखा है। 1963 में प्रकाशित इस कृति को समाजशास्त्र के विद्यार्थियों को अवश्य पढनी चाहिए। इस कृति में उन्होंने बहुत रोचक शैली में गंभीर प्रश्नों पर विचार किये हैं। अब यह बताना कि अन्य सामाजिक विज्ञानों की तुलना में समाजशास्त्रियों पर कम चुटकुले हैं और उसकी पर्याप्त वजह भी है, इसे वह स्पष्ट करते हैं।[2] आज के दौर की यह बात नहीं है पर यह स्पष्ट होता है कि किसी विषय का उभरना और स्थापित होना आसान नहीं होता है।

समाजशास्त्र पर आरंभ से ही वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन का करने का दबाव रहा है। इसके पीछे सबसे बड़ा तर्क यह रहा है कि सामाजिक घटनाओं का अध्ययन वस्तुनिष्ठ ढंग से होना चाहिए। वस्तुनिष्ठता का मतलब है कि वस्तुएं जैसी हैं वैसे ही देखी जायें। उस पर हम किसी तरह के अर्थ को आरोपित करने से बचें। यह अर्थ का आरोपित करना बहुत हद तक हमारे दृष्टिकोण को पूर्वाग्रह से भर देता है। वस्तुनिष्ठता का मतलब है क्या है, न कि क्या होना चाहिए। वस्तुनिष्ठता का यह आग्रह समाजशास्त्र में काफी समय तक प्रभावित रहा है और इस कारण होना क्या चाहिए और मानवीय उन्मुखन के लिए संभावनाएं कम रही हैं। 1960 के बाद ही इस तरह की विचारधारा का विकास ज्यादा हुआ और उसके पर्याप्त कारण रहे हैं। ज्यादातर समाजशास्त्रियों ने व्यक्ति की प्रस्थिति का विश्लेषण सामाजिक सांस्कृतिक संरचना के आधार पर किया है। यह सामान्य रूप से स्वीकार किया जाता है कि व्यक्ति अपनी सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। ऐसे में यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि क्या मनुष्य इन परिस्थितियों को बाध्यकारी ढंग से स्वीकार करने के लिए बाध्य है अथवा इस बात की संभावना है कि वह इन परिस्थितियों में परिवर्तन कर सकें। इन प्रश्नों पर पीटर बर्जर ने अपनी पुस्तक इनविटेशन टू सोशियोलॉजी के आठवें अध्याय एज ए हयूमनिस्टिक डिसीप्लीन में विचार किया है। उनके विचारों का सार यह है कि सामाजिक संरचनाएं हमें कठपुतलियों की तरह प्रभावित करती हैं पर हमारे पास यह संभावना है कि हम अपनी हरकतों को रोक दें, उपर की ओर देखें , धागे और बंधन को अस्वीकार कर दें और यह सब कैसे हो रहा है अर्थात् इसकी यांत्रिकता क्या है, इससे परिचित हो जायें। यह मनुष्य के सशक्त और समर्थ होने का प्रतीक है। हम कठपुतलियों जैसे हैं पर कठपुतलियां नहीं हैं। अगर हम ऐसा देख पाते हैं तो स्वतंत्रता की ओर यह हमारा पहला कदम होगा और इसके निष्कर्ष के रूप में हम समाजशास्त्र के मानवतावादी अनुशासन का औचित्य[3] स्पष्ट कर सकते हैं। बर्जर यह समझा पाने में सफल रहे हैं कि समाजशास्त्र को मानवतावादी उन्मुखन की आवश्यकता क्यों है और कैसे इससे हमारा ज्ञान और समाज बेहतर हो सकता है। इस मानवतावादी उन्मुखन को अन्य लोगों ने भी अपनी विविध कृतियों में महत्व दिया है। आर एस लिण्ड एवं हेलेन मैरेल लिण्ड के अध्ययनों में भी मानवीय उन्मुखन की चर्चा आयी है। आर एस लिण्ड ने अपनी चर्चित कृति नॉलेज फॉर हॅवाट : द प्लेस आफ सोशल साइंस इन अमेरिकन कल्चर (1939) में इन प्रश्नों पर विचार किया है। हेलेन लिण्ड ने अपनी कृति ऑन शेम एण्ड द सर्च फॉर आइडेंटिटी (1958) में फ्रायड और पार्सन्स की आलोचना की है।[4] अपनी अन्य रचनाओं में भी उन्होंने मानवीय अर्थ और क्रिया के अध्ययन को महत्व दिया है। इन सब के कहने का आशय यह है कि केवल वस्तुनिष्ठता से समाज का अध्ययन संभव नहीं है, हमें आत्मनिष्ठ तरीके से अध्ययन करना चाहिए। हमें यह समझने की आवश्यकता है कि पीटर बर्जर ने व्यक्ति में समाज और समाज में व्यक्ति इन दोनों ही पहलुओं को महत्व दिया है । वह किसी एक ही तरह से समाजशास्त्र का अध्ययन हो, ऐसा नहीं मानते हैं। यह बहुत ही स्वाभाविक है और यह संतुलित भी है।

वास्तविकताएं जिसे हम समझते और स्वीकार करते हैं उसका आधार क्या होता है, किस प्रकार से वे निर्मित होती हैं इसे जानने में ज्यादातर समाजशास्त्रियों की रूचि रही है। यह सामान्य तौर पर समझा जाता है कि हमारी सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाएं इस तरह की स्थिति का निर्धारण करती हैं। हम इससे प्रभावित होते हैं। यह धारणा काफी हद तक सही लगती है पर है नहीं। देकार्ते के इस कथन से कि हम सोचते हैं इसलिए हम हैं के दौर से समाज काफी आगे बढ चुका है। हमारा सामाजिक जीवन काफी जटिलताओं से भर चुका है। वास्तविकता क्या है, इस विषय पर चर्चा ज्ञान के समाजशास्त्र के अन्तर्गत होती रही है। कार्ल मैनहीम ने अपनी कृति आइडियोलॉजी एण्ड यूटोपिया में इसकी चर्चा की है। हाल के दशकों में मिशेल फूको ने ज्ञान के शक्ति और विमर्श की चर्चा में भी ज्ञान और सामाजिक संरचना के सम्बन्ध और उसके विशिष्ट संदर्भ में प्रयोग को महत्व दिया है। मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रेरणास्पद लेखन वाले रचनाकारों जैसे डेविड एस. बर्न[5], जेफ कैलर[6] आदि ने यह स्पष्ट किया है कि हम अपने चिंतन के तरीके को परिवर्तित कर अनुभव को परिवर्तित कर सकते हैं। आज के दौर में ज्यादातर लोग अपने आपको तनाव ग्रस्त, अवसाद ग्रस्त बताते हैं। उन्हें लगता है कि उन्हें वह

सम्मान, प्यार, आदर नहीं प्राप्त हो रहा है जो मिलना चाहिए था। विविध उपचार के तरीकों चाहे वे आध्यात्मिक शिविर हों, मनोवैज्ञानिक सलाह या प्रेरणास्पद लेखन उसमें यह बताया जाता है कि हमें अपने नजरिये को बदलने की आवश्यकता है और इससे हम अपेक्षित सफलता और शांति प्राप्त कर सकते हैं। यह हमारे आज के समाज का ज्ञान है। हमें ज्ञान के इस स्तर को भी समझना चाहिए।

पीटर बर्जर का यह कहना है कि हम जिसे वास्तविकता समझते हैं वह वास्तविकताएं समाज द्वारा निर्मित होती हैं और एक निश्चित प्रक्रिया के बाद ही वास्तविकता का निर्माण हो सकता है, अन्यथा नहीं। इसे स्पष्ट करते हुए उन्होंने बताया है कि समाज के सदस्य के रूप में हमारे पास जो ज्ञान और सूचनाएं होती हैं उसी के अनुरूप हम वास्तविकता को समझते हैं, अर्थ देते हैं, महत्व देते हैं। ये वास्तविकताएं दो स्तरों पर निर्मित होती हैं एक तो व्यक्तिगत स्तर पर और दूसरा सामाजिक या सामूहिक स्तर पर। हम अगर किसी से मैत्री या प्रेम सम्बन्ध को जीते हैं तो यह व्यक्तिगत स्तर की वास्तविकता है जिसे हमने निर्मित की है क्योंकि इस तरह के सम्बन्ध से पहले उसका अस्तित्व नहीं था वह हमारे द्वारा निर्मित की गयी है। सामाजिक और सामूहिक स्तर की वास्तविकता वह होती है जिसे हम समाज की मान्यताओं के अनुसार जीते हैं और स्वीकार करते हैं। इसके तहत ही हम पुलिस, विश्वविद्यालय, नौकरशाही की वास्तविकता को सामूहिक स्तर पर स्वीकार करते हैं। यह वास्तविकता भी निर्मित है। पहली वास्तविकता आत्मनिष्ठ और दूसरी वास्तविकता वस्तुनिष्ठ कही जा सकती है। इन दोनों ही तरह की वास्तविकता को समन्वित रूप[7] से उन्होंने लकमैन के साथ मिलकर लिखी कृति द सोश्यल कंस्ट्रक्शन ऑफ रियलिटी में रखा है। यहां पर यह प्रश्न उठता है कि इन वास्तविकताओं का निर्माण किन प्रक्रियाओं से संभव होता है। इस संदर्भ में बर्जर का यह मानना है कि वास्तविकताओं के निर्माण में तीन तरह की प्रक्रियाएं शामिल होती हैं–वाह्यकरण, वस्तुकरण और आन्तरीकरण।

वालेस एण्ड वूल्फ ने यह स्पष्ट किया है कि बाहरीकरण की प्रक्रिया एक दोहरी प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में पहले से स्थापित वास्तविकताओं को हम स्वीकार करते हैं और इसके साथ–साथ एक नयी वास्तविकता भी निर्मित करते हैं। स्थापित सामाजिक संस्थाओं को हम स्वीकार करते हैं और प्रेम तथा मैत्री सम्बन्धों को निर्मित भी करते हैं। यह दोहरी प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया का महत्व इस बात में है कि इससे हमें यह आभास होता है कि हम स्व या आई के स्तर पर गढ सकने में सक्षम हैं इसका पता हमें चलता है।[8] दूसरी प्रक्रिया वस्तुकरण की है। इसका साधारण सा अभिप्राय यह है कि जो वास्तविकताएं निर्मित की गयी है उस वास्तविकता की स्वीकृति बढ जाती है। इस स्तर पर व्यक्ति से अवधारणा स्वतंत्र हो जाती है। उसकी स्वीकृति बढ जाती है। आज हम जिसे अपना मित्र कहते हैं पहले वह वास्तविकता नहीं थी। धीरे–धीरे बढी। अब हमारे परिचितों को पता है कि हमारे और उसके मैत्री सम्बन्ध हैं। यह हमारी धारणा की व्यापकता और समाज के द्वारा स्वीकृति मिलना ही है। इसमें भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। आज हम सेल्फी जैसे शब्दों से परिचित हैं, पहले नहीं थे। आज ऐसे शब्द बढते जा रहे हैं। वस्तुतः वस्तुकरण की प्रक्रिया यह स्पष्ट करती है कि अब वह सम्बन्ध या वस्तुएं या अवधारणाएं हमारे नियंत्रण से निकल चुकी हैं और हमें गहराई से प्रभावित करने लगी है। इसका केवल सकारात्मक आयाम ही हो ऐसा नहीं है। मार्क्सवादी लेखन में दैवीकरण, जड़वस्तुकरण या रिफिकेशन की अवधारणा भी ऐसी ही है। मनुष्य अपनी सूझ–बूझ और परिश्रम से जिन वस्तुओं को मनचाहा आकार देता है, वे एक बार अस्तित्व में आने के बाद न केवल मनुष्य के नियंत्रण से बाहर हो जाती हैं बल्कि स्वयं मनुष्य के जीवन को नियंत्रित करने लगती हैं।[9] मार्क्सवादी चिंतन में यह अवधारणा नकारात्मक अर्थ में प्रयुक्त होती रही है जबकि बर्जर इसे सामान्य अर्थों में प्रयोग करते हैं। बर्जर यह स्पष्ट करने भर के लिए इस अवधारणा का प्रयोग करते हैं कि किस तरह से वास्तविकताएं जन्म लेती हैं। उनका अस्तित्व हम पर निर्भर है। उनका अस्तित्व स्वतंत्र नहीं है, स्वायत्त है। इससे स्पष्ट है कि बर्जर का संदर्भ अलग हैं । आन्तरीकरण की प्रक्रिया तीसरी प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में समाज के सदस्य होने के नाते हम समाजीकरण की प्रक्रिया से गुजरते हैं। इसमें समान प्रतिमान, मूल्य और व्यवहारात्मक प्रत्याशाओं की हमारी साझेदारी होती है इससे एक ही तरह की सामाजिक दुनिया की साझेदारी संभव हो पाती है।[10] यह आन्तरीकरण की प्रक्रिया इस दृष्टि से ज्यादा महत्वपूर्ण है कि इसके बिना समाज के सदस्यों की अन्तःक्रिया ही संभव नहीं है। वास्तविकताएं समाज के द्वारा गढे जाने के बाद जब लोगों द्वारा अपनायी जायेंगी तभी उनका अस्तित्व संभव हो सकेगा, अन्यथा नहीं। इसमें समाजीकरण की प्रक्रिया की भूमिका अहम हो जाती है क्योंकि यह समाज के सदस्यों को अपने समाज के मूल्य, प्रतिमान आदि से परिचित कराता है। समाज के सदस्य इन्हें आत्मसात कर चुके होते हैं, आन्तरिक रूप से अपने व्यवहार में स्थान दे चुके होते हैं इसलिए आन्तरीकरण हो जाता है। हमें यह समझना होगा कि इस आन्तरीकरण से हमारा सामाजिक जीवन संभव हो पाता है। चर्चित प्रकार्यवादी विचारक टाल्कट पार्सन्स के चिंतन में भी हम पाते हैं कि उन्होंने मूल्यों के प्रति सहमति को हमारे सामाजिक जीवन का महत्वपूर्ण आयाम कहा है। यह मूल्यों के प्रति सहमति इसलिए बन पाती है कि हम समाजीकरण की प्रक्रिया से गुजरते हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि पार्सन्स यह स्पष्ट करने के लिए मूल्यों के प्रति सहमति की चर्चा करते हैं कि समाज के सदस्य सामाजिक व्यवस्था को कैसे स्वीकार करते हैं, कैसे बरकरार रखते हैं।

पार्सन्स ने कहा कि व्यक्ति निष्क्रिय रूप से समाज के नियमों और मूल्यों को समाजीकरण से अपना लेता है। यह सामाजिक भर्ती की प्रक्रिया है अर्थात् जन्म के समय जो शिशु एक मनोजैविक यथार्थ होता है वह समाजीकरण से एक सामाजिक सांस्कृतिक यथार्थ में परिणत होता है।[11] इसे बर्जर ने अलग संदर्भ में देखा है। बर्जर का संदर्भ यह है कि हम गढी गयी व्यवस्था को इस प्रक्रिया के माध्यम से और प्रभावशाली बनाते हैं। इस तरह से ये तीन

प्रक्रियाएं हमारे सामाजिक जीवन की वास्तविकता को निर्मित करती है। दिलचस्प यह है कि जिसे हम सामाजिक वास्तविकता कहते हैं वह वास्तव में हमारे द्वारा निर्मित है, न कि वास्तविक यथार्थ यह स्पष्ट करने में बर्जर सफल रहे हैं। हम विवाह, मैत्री, कैरियर, प्रेम इस तरह की वास्तविकता को गढते हैं। विवाह विच्छेद, प्रेम में असफलता आदि की स्थितियों में किसी भी व्यक्ति के लिए इससे उबरना आसान नहीं होता है। वह तनाव ग्रस्त हो जाता हैं। मनोवैज्ञानिक सलाह भी इस तरह की दी जाती है कि जब यह सब जीवन में नहीं था तब भी जीवन था । यह भी वास्तविकता के गढे जाने की ओर ही इंगित करता है। इसे सामाजिक वास्तविकता के उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है।

धर्म हमारे सामाजिक जीवन का एक ऐसा पहलू है जिस पर ज्यादातर लोगों ने लिखा है। समाजशास्त्र के विद्यार्थी के रूप में हम इस तथ्य से अवगत है कि धर्म हमारे सामाजिक जीवन में पर्याप्त हस्तक्षेप रखता हैं। धर्म की समाजशास्त्रीय चर्चा में दुर्खीम, मार्क्स, वेबर प्रमुख हैं। इन शास्त्रीय विचारकों ने धर्म की चर्चा की है पर इनके विचारों में गहरी भिन्नताएं हैं। दुर्खीम के लिए समाज ही धर्म है, मार्क्स के लिए धर्म अफीम है और वेबर के लिए हमारी आर्थिक गतिविधियों को प्रभावित करने में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। बर्जर इन शास्त्रीय चर्चा से हटकर अपनी बात कहते हैं। 1967 में प्रकाशित द सेक्रेड कैनोपी जिसे हम हिन्दी में पवित्र वितान कहते है, में बर्जर ने अपने विचार दिये हैं। यह धर्म का वितान भी सामूहिक है और हमारे द्वारा ही गढा गया है। सामाजिक वास्तविकता के निर्माण की तीन प्रमुख प्रक्रियाएं यहां भी हैं और इसी के द्वारा यह वितान गढा गया है। हमारी मान्यताएं, विश्वास, व्यवस्था आदि की अवधारणाएं क्रमशः बाहरी हो जाती है, समाज द्वारा इनका वस्तुकरण हो जाता है और अन्ततः समाज के सदस्य के रूप में हम इसे आत्मसात कर लेते हैं और आन्तरीकरण की प्रक्रिया भी संभव हो जाती है। धर्म की विशेषता यह है कि यह हमारे जीवन की नहीं समझ में आने वाली घटनाओं, अनिश्चितताओं, उपद्रव, भय, रहस्य, रोमांच आदि के प्रति एक सुरक्षा कवच या घेरा प्रदान करती है। यह घेरा या आवरण पवित्र होता है। धर्म की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका यह है कि यह हमें अपने जीवन के बड़े संकटों का सामना करने और उसे सहन करने की शक्ति प्रदान करता है। हमें धर्म की इस भूमिका को समझना ही होगा। हमारी रोज की प्रार्थनाएं और वार्षिक रूप से आयोजित होने वाले रमदान, इस्टर आदि पवित्र और सामान्य में हमारे लिए अंतर प्रस्तुत करते हैं। हम अगर अपने जीवन में सर्वोच्च सुरक्षा और स्थायित्व इसी धर्म के माध्यम से महसूस कर सकते हैं, ऐसा उन्होंने बताया है।[12] यह सही है कि धर्म हमारे व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन में विविध गतिविधियों कर्मकाण्डों में अभिव्यक्त होता है और उसकी अति महत्वपूर्ण भूमिका भी है। यह अलग बात है कि आधुनिकता ने जिस तार्किकता को बढावा दिया उस कारण कई बार धर्म सम्बन्धी विश्वासों और मान्यताओं को अस्वीकृत किये जाने के प्रयास भी हुए पर वे सफल नहीं रहे हैं। पाश्चात्य समाज में चले ईश्वर नहीं है या ईश्वर मर चुका है जैसे आंदोलनों से उन्होंने असहमति जाहिर की है। उन्हें यह लगता है कि हम अपने जीवन के सरल और सामान्य सी लगने वाली छोटी–छोटी घटनाओं में ईश्वर को महसूस करना चाहिए। ऐसा उन्हें इसलिए जरूरी लगता है कि हमारा सामाजिक जीवन सुचारू रूप से चल सके। यह सही है कि आज के हमारे जीवन में पुराने और पारम्परिक सामूहिकतावादी धर्म का स्वरूप हूबहू वही नहीं हो सकता है। उसमें परिवर्तन आये हैं। थॉमस लकमैन ने भी अपनी कृति द इनविजिवल रिलीजन में इसकी चर्चा की है। इनविजिवल रिलीजन का मतलब है धर्म का अदृश्य हो जाना । इसका आशय इस से है कि धर्म का जो सामूहिक स्वरूप और गतिविधियां, कर्मकाण्ड, उत्सव और जूलूस आदि पहले दिखते थे अब नहीं दिखते हैं। इसलि अगर हम उस धर्म के स्वरूप से आज को समझना चाहें तो यह संभव नहीं है। इससे धर्म का परिचित संस्थात्मक रूप समाप्त हो चुका है, व्यक्तिगत धर्म का उभार हो रहा है। आज हम धार्मिक मामलों में पहले की तुलना में ज्यादा स्वतंत्र हैं। हमारा व्यक्तिगत जीवन, हमारा समय, हमारी प्राथमिकता इसे अब निर्धारित करते हैं। बर्जर इन तथ्यों से परिचित हैं पर उन्हें यह लगता है कि धर्म हमारी बहुत सारी मानसिक समस्याओं को सुलझा रहा है और इसकी आवश्यकता समाज को है। धर्मनिरपेक्षीकरण की चर्चाएं चली तो बहुत ही ज्यादा है पर वास्तव में धर्म से समाज मुक्त नहीं हो पाया है। बर्जर को यह लगता है कि आधुनिकता ने हमारी बहुत सारी मान्यताओं को परिवर्तित किया है, इसमें धर्म भी है। इसमें हम परिवार और धर्म के प्रति ठीक वैसे ही नहीं सोच रहे हैं जैसे कि पहले सोचते रहे हैं। आज इन आयामों में हमारा धार्मिक जीवन प्रभावित हुआ है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार पीटर बर्जर का चिंतन फलक व्यापक है। उन्होंने समाजशास्त्र विषय के प्रति अपने उत्तरदायित्व को तो निभाया ही है और हमें इस बात के लिए प्रभावित भी किया है कि हम अपने नजरिये को विकसित कर सके। सामाजिक वास्तविकता की निर्मिति के प्रश्न इसलिए गंभीर है कि प्रायः इसे नहीं समझने के कारण हम सामाजिक विविधता को स्वीकार नहीं कर पाते हैं। यह भी सही है कि इससे अलग सांस्कृतिक मान्यताओं के प्रति हमारा दृष्टिकोण सहमति और स्वीकृति का नहीं रहता है। सामाजिक वास्तविकता का निर्माण हमारी बहुत सारी आशंकाओं और समस्याओं का समाधान कर देता है। हमारे जीवन में अनिश्चितता के पहलूओं को समझने के लिए और आपदाओं को सहने के लिए धर्म कितना सहायक हो सकता है इसे भी वह स्पष्ट कर देते हैं। यह बिल्कुल सही है कि धर्म का वितान हमारे लिए अति आवश्यक है। पीटर बर्जर ने हमारे जीवन की विविधताओं पर लिखा है और वह उपन्यासकार भी रहे हैं। उनके लेखन में हमारे जीवन की विविधता दिखती है जिसे समझने की आवश्यकता है। बर्जर का सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह है कि वह मानवीय उन्मुखन को ज्यादा महत्व देते हैं। वैज्ञानिकता का आग्रह जो कि शास्त्रीय समाजशास्त्र में सबसे अधिक रहा है उसे वह अस्वीकार

करते हैं और समाजशास्त्र में मानवीय गरिमा को महत्व देते हैं, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मानवीय उन्मुखन के समाजशास्त्री के रूप में वह हमेशा ही याद किये जाते रहेंगें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *पेंग्विन डिक्शनरी ऑफ सोशियोलॉजी (2006), पेंग्विन बुक्स, पृ–30–31*
2. *बर्जर, पीटर (1963) इनविटेशन टू सोशियोलॉजी, पेंग्विन बुक्स, पृ–11*
3. *बर्जर, पीटर (1963) वही, पृ–199*
4. *ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी ऑफ सोशियोलॉजी, (2004) पृ–377)*
5. *बर्न्स, डी. डेविड (1999), द फीलिंग गुड हैंडबुक, एप्लूम बुक, पेंग्विन ग्रुप्स*
6. *कैलर, जेफ (2012), एट्टीटयूड इज एवरीथिंग, पेंटागन प्रेस, न्यू देहली*
7. *मिचेल मन (2003) मैकमिलन स्टूडेंट इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोशियोलॉजी, मैकमिलन, पृ–23*
8. *वालेस, रूथ ए. एवं वुल्फ, एलिसन (2008), कंटेम्पररी सोशियोलॉजिकल थ्योरीज, प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ–287–288*
9. *गाबा, ओ. पी. (2017), राजनीति विज्ञान विश्वकोश, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा, पृ–70510) डिलने टीम (2008), कंटेम्पररी सोश्यल थ्योरी, पीयरसन, पृ0–195*
10. *हुसैन, मुजतबा (2010) समाजशास्त्रीय विचार, ओरियंट ब्लैकस्वान, हैदराबाद, पृ–272*
11. *मैकियोनिस, जान जे (2009) सोशियोलॉजी, दसवां संस्करण, पीयरसन, पृ–491*